मैं कौन हूँ?

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

जीव का अस्तित्व आत्मा पर निर्भर है। आत्मा ही अस्तित्व है। मैं कौन हूँ? इसे जान लेने पर मनुष्य का व्यक्तित्व बदल जाता है। बच्चे के जन्म होने पर माता–पिता उसका नामकरण करते हैं। उसकी जाति निश्चित हो जाती है। गौत्र, धर्म, कुल निश्चित हो जाते हैं। जिस धर्म या कुल में वह उत्पन्न होता है वंश परम्परानुसार उसके धर्म निश्चित हो जाते हैं। पुरूषार्थ के द्वारा वह अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है। व्यक्ति अपने नाम से अपनी पहचान बना लेता है। इसी तरह उसका जीवन व्यतीत हो जाता है। सम्पूर्ण जीवनभर यह प्रक्रिया चलती रहती है। मनुष्य यह सोच ही नहीं पाता कि नाम, गौत्र, जाति, धर्म के अतिरिक्त उसका मूल अस्तित्व क्या है? मैं मात्र शरीर नहीं हूँ। मन, वचन, काया रूप शरीर पूर्व जन्म के कर्म और मानवकृत कर्मों के भुगतान के लिए है। पूर्व जन्म के कर्म इस जन्म में द्रव्य कर्म के रूप में बदल जाते हैं।

सनातन सत्य इससे पृथक् है। शरीर से परे शुद्ध आत्मा है। आत्मा अनन्त सुख का धाम है। वह सच्चिदानन्द स्वरूप है। मैं बोल रहा हूँ, मुझे बुलाने वाला कौन है? मुझे बुलाने वाला आत्मा है। शरीर कर्म करने के लिए है। कर्म कराने वाला आत्मा है। आत्मा शुद्ध, बुद्ध, मुक्त है। आत्मा आनन्द का निधान है। बाहर का सुख उसका बिन्दूमात्र है। अन्दर का सुख समुद्र के समान है। आत्मा के स्तर पर जीव में कोई भेद नहीं है। भेद शरीर के स्तर पर है। शरीर भोगायतन है। कर्मों का भोग करने के लिए शरीर प्राप्त होता है। इन सबको छोड़कर अस्तित्व को पहचानने का प्रयास करना चाहिए।

जड़ और चेतन भिन्न स्वभाव वाले हैं। जड़ न तो चेतन हो सकता है और न चेतन जड़ हो सकता है। दोनों की सत्ता पृथक–पृथक है। इस तथ्य को जानना ही भेद विज्ञान है। मैं कौन हूँ? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि मैं चेतन तत्व हूँ। चेतन तत्व जड़ का संचालन करता है। चेतना के कारण शरीर चेतनवत् प्रतीत होता है। जीवात्मा अन्तरात्मा और परमात्मा

के तीन स्तर है। स्वार्थ, परार्थ और परमार्थ की भावना त्रि–स्तरीय है। जीवात्मा शरीरबद्ध है। अन्तरात्मा के कारण जीवात्मा कार्य करता है। परमात्मा सर्वोच्च आत्मा है। मोक्ष का धाम है।

आत्मा सनातन सत्य है। मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? कहाँ जाउंगा? इन प्रश्नों के उत्तर के लिए आत्मचिन्तन करना पड़ता है। इन प्रश्नों का समाधान बाह्य जगत में नहीं बल्कि आन्तरिक जगत में खोजना पड़ता है। मैं कौन हूँ? जब यह प्रश्न उपस्थित होता है तो आत्मा की सत्ता सामने आ जाती है। शरीर आत्मा नहीं है। शरीर जड़ पदार्थ है। मैं शब्द के द्वारा जिसका बोध होता है वही आत्मा है। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। शरीर विनासशील है और आत्मा अविनाशी। शरीर को चलाने वाला आत्मा ही है।

यह जगत् दो तत्वों से मिलकर बना है– जड़तत्व और चेतनतत्व। जड़तत्व वह है, जिसमें पूरण और गलन की क्रिया होती है। दर्शन की भाषा में इसे पुद्गल या भौतिक तत्व कहते है। आत्मतत्व वह तत्व है जिसमें हलन–चलन कि क्रिया होती है। ये दोनों तत्व शाश्वत हैं। इनके गुण पृथक–पृथक हैं। दोनों को मिश्रण को संसार कहते हैं। शरीर भौतिक तत्वों से बना है। चेतनतत्व इसे संचालित करता है। यदि चेतनतत्व न रहे तो शरीर नष्ट हो जायेगा। आत्मा हर प्राणी में होती है। शरीर के नष्ट होने पर आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में अपने कर्म के अनुसार चली जाती है। जड़तत्व इस ब्रह्माण्ड में रहता है। जब तक कार्मण शरीर का आत्मा से संबंध रहता है, तब तक जीव को शरीर धारण करना पड़ता है। जब आत्मा कर्मों से मुक्त होती है तो वह मोक्ष को चली जाती है। संयोग, वियोग, सुख, दुःख चलता रहता है।

आत्मसाक्षात्कार के द्वारा जीव मुक्त होता है। इस संसार में अनेक विद्यायें हैं। किन्तु आत्मविद्या सबसे बड़ी विद्या है। जिसको इस विद्या का ज्ञान हो जाता है, उसके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं रहता है। जिसने इस विद्या को जान लिया वह सबकुछ जान लेता है। इसलिए कहा गया है– जे एगं जाणइ ते सव्वं जाणइ अर्थात् जो एक को जान लेता है, वह सबको जान लेता है। आत्मा ही एक ऐसा तत्व है, जिसको जान लेने के बाद सबकुछ जान लिया जाता है। अब प्रश्न उठता है कि आत्मतत्व को जाना कैसे जाये? आत्मतत्व के ज्ञान की अनेक विधियां बताई गयी है। राग–द्वेष रहित होकर आत्मतत्व की प्रेक्षा करने से आत्मतत्व का दर्शन

होता है। आत्मा में अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन और अनंत सुख का स्रोत है। मानव भौतिक सुखों के प्रति आकृष्ट होकर जीवनभर उसी में लिप्त रहता है और इसी को बहुत बड़ा सुख मानता है। अंदर सुख भंडार इतना विशाल है कि उसका ज्ञान हो जाने पर उसका स्रोत निरंतर प्रवाहित होता रहता है।

मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? कहां जाऊंगा? इन तीनों प्रश्नों से आत्मसाक्षात्कार प्रारंभ होता है। मानव अपने आत्मा को जानने का कभी प्रयास ही नहीं करता। उसकी दृष्टि बहिर्मुखी होती है। सत्संग के प्रभाव से शास्त्रों के अध्ययन से और गुरुओं के सान्निध्य से जब मानव का विवेक जागृत होता है तो उसे आत्मतत्व जानने की प्रेरणा मिलती है।